श्री चौबीस तीर्थंकर विधान

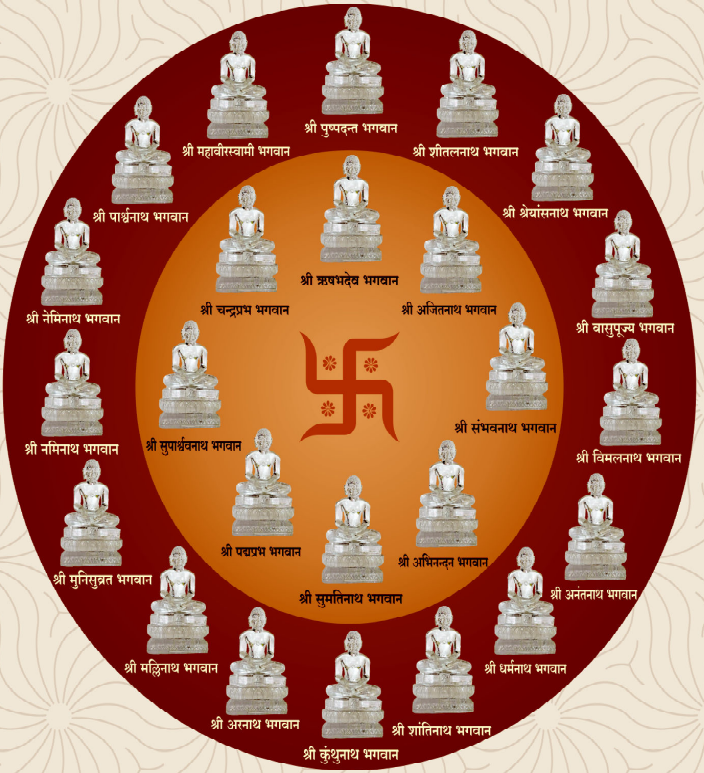

– राजकुमार शास्त्री, द्रोणगिरि

Created by Universal Document Converter

लेखक द्वारा लिखित प्रकाशित साहित्य

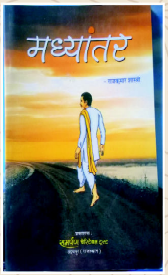

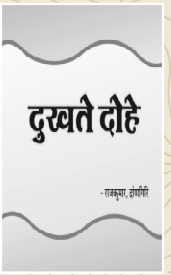

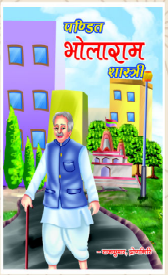

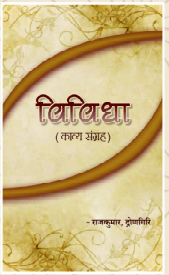

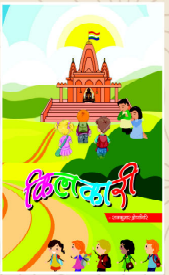

Created by Universal Document Converter

समर्पण चैरिटेबल ट्रस्ट का 40वाँ पुष्प

श्री चौबीस तीर्थंकर विधान

रचयिता

राजकुमार शास्त्री, द्रोणगिरि

प्रकाशक

समर्पण

18, आदिनाथ कॉलोनी, केशवनगर, उदयपुर (राज.)

मो. 91 9414103492

Created by Universal Document Converter

प्रथम संस्करण : 2000 प्रतियाँ
[प्रकाशन तिथि फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा (अष्टाह्निका पर्व, 17 से 24 मार्च 2024) वीर निर्वाण संवत् 2050]

प्राप्ति स्थान : **शाश्वतधाम, उदयपुर (राज.)**
मो. 91-9414103492
: **श्री दिनेश शास्त्री, जयपुर**
मो. 91-9928517346

साहित्य प्रकाशन हेतु सहयोग राशि : 25/-

मुद्रक : देशना कम्प्यूटर्स
82, पॉल्ट्री फार्म, आगरा रोड, जयपुर
मो. 9928517346

प्रस्तुत प्रकाशन में सहयोग करने वाले महानुभाव

1. श्री रोशनलाल भँवरदेवी फांदोत, से 4, उदयपुर	2100/-
2. गुप्तदान, कोटा	2100/-
3. श्री कचरुलाल देवीलालजी संगावत करावली/वसई रोड, मुंबई	2100/-
4. श्रीमती उर्मिला-श्री नेमिचन्द्र बघेरवाल, भीलवाड़ा	2100/-
5. श्री विद्या-सागर जैन, उदयपुर	1000/-
6. श्री नेमिचन्द चंपालाल भोरावत चेरीटेबल ट्रस्ट, उदयपुर	1000/-
7. गुप्तदान, उदयपुर	1000/-
8. श्री गोपाल पाटनी, पटना	700/-
9. स्वराज परिवार	700/-
10. ऑनलाइन जैन पाठशाला, इन्दौर	500/-
11. श्री वीरेन्द्रकुमार जैन, लखनऊ	500/-
12. पण्डित अमित 'अरिहंत', भोपाल	250/-

Created by Universal Document Converter

प्रकाशकीय

'**समर्पण**' द्वारा आठ वर्ष की अल्पावधि व सीमित साधन होने पर भी आप सबके असीमित स्नेह से 39 पुष्पों की लगभग 69 हजार प्रतियाँ प्रकाशित कर समाज के समक्ष प्रस्तुत की जा चुकी हैं।

राजकुमार शास्त्री द्वारा लिखित यह 40वाँ पुष्प '**चौबीस तीर्थंकर विधान**' प्रस्तुत है। अभी तक हमारे द्वारा प्रकाशित सभी साहित्य को पाठकों ने हृदय से सराहा है। यह प्रसन्नता का विषय है कि हमें पुस्तक प्रकाशन के पूर्व ही अर्थ सहयोग प्राप्त हो जाता है। अत: बाद में हम '**जो चाहो ले जाओ, जो चाहो दे जाओ**' की भावना से पाठक को साहित्य उपलब्ध कराते हैं, इसमें जो राशि आती है, उसे अन्य प्रकाशन में आवश्यकतानुसार उपयोग करते हैं।

सिद्ध परमेष्ठी के रूप में विराजमान वीतरागी-सर्वज्ञ-हितोपदेशी समानगुणयुक्त चौबीस तीर्थंकरों में ग्रह-नक्षत्र-राशि आदि की दृष्टि से भेद करते हुए वर्तमान में अलग-अलग दिन शांतिधारा, पूजन, व्रत आदि का प्रचलन बढ़ रहा है। ऐसे में रचनाकार ने इस विधान के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि सभी तीर्थंकरों में वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु, सात तत्त्व, द्रव्य-गुण-पर्याय, मोक्षमार्ग, उपादान-निमित्त, कर्ता-कर्म, निश्चय-व्यवहार आदि समस्त विषयों का एक जैसा ही उपदेश दिया है। सभी एक जैसे पूज्य हैं, उनमें भेदभाव करना अज्ञानता है। इस दृष्टि से यह विधान यहाँ भक्तिभाव से भरा हुआ है, वहीं विशिष्ट सिद्धान्तों को समझने में भी सहयोगी बनेगा।

पुस्तक के सुन्दर मुद्रण के लिए श्री दिनेश शास्त्री (देशना कम्प्यूटर्स) जयपुर, अर्थ सहयोग हेतु अन्य साधर्मियों का भी आभार।

लेखन/मुद्रण में किसी भी प्रकार की त्रुटि हो तो कृपया हमें अवगत करायें, जिससे कि भविष्य में ध्यान रखा जा सके।

अब आपके हाथों में है - '**चौबीस तीर्थंकर विधान**'।

निवेदक - **समर्पण परिवार**

मो. 9414103492

Created by Universal Document Converter

समर्पण चैरिटेबल ट्रस्ट : एक परिचय

देव-धर्म-गुरु के चरणों में, तन-मन-धन सब अर्पण।
आतमहित व तत्त्वज्ञान को, है सर्वस्व समर्पण।।

ट्रस्ट का नाम - समर्पण चैरिटेबल ट्रस्ट | **स्थापना तिथि** - 20 सितम्बर 2014

ट्रस्ट मण्डल

संरक्षक : 1. श्री अजित जैन बड़ौदा, 2. श्री ताराचन्द जैन उदयपुर, 3. श्री प्रकाशचन्द छाबड़ा सूरत, 4. श्री ललितकुमार किकावत लूणदा।

अध्यक्ष - राजकुमार शास्त्री उदयपुर, **उपाध्यक्ष** - अजितकुमार शास्त्री अलवर, **कोषाध्यक्ष** - रमेशचन्द वालावत उदयपुर, **महामंत्री** - डॉ. महेश जैन भोपाल, **मंत्री** - पीयूष शास्त्री जयपुर, **ट्रस्टी** - पण्डित अशोकुमार लुहाड़िया मंगलायतन, डॉ. ममता जैन उदयपुर, ऋषभकुमार शास्त्री छिन्दवाड़ा, रतनचन्द शास्त्री भोपाल, इंजी. सुनील जैन छतरपुर, गणतंत्र 'ओजस्वी' आगरा।

ट्रस्ट की सामान्य रूपरेखा - उद्देश्य : 1. तत्त्वज्ञान, अहिंसा, शाकाहार, सदाचार का प्रचार करना। 2. सामाजिक विकृतियों के विरुद्ध जागरुकता पैदा करना। 3. अनुपलब्ध, आवश्यक व नये लेखकों का श्रेष्ठ साहित्य प्रकाशित करना। 4. सर्वोपयोगी पत्रिका प्रकाशित करना। 5. शिक्षा व चिकित्सा के क्षेत्र में आवश्यक मार्गदर्शन, सहयोग एवं कार्य करना।

गतिविधि - 1. साहित्य प्रकाशन - अभी तक 37 पुस्तकों का प्रकाशन, **2. संस्कार सुधा** मासिक पत्रिका का प्रकाशन, **3. सुखायतन** - सुखार्थी साधर्मियों के लिए द्रोणगिरि में नि:शुल्क-सशुल्क आवास-भोजन की व्यवस्था। **4. 'प्रयास'** - जैन समाज के युवा वर्ग को धार्मिक संस्कारों के साथ प्रशासनिक/सी.ए./नीट/आई.आई.टी. इत्यादि की तैयारी करने हेतु व्यवस्था। **5. साधर्मी वात्सल्य योजना** - साधर्मियों से स्वैच्छिक सहयोग लेकर योग्य साधर्मियों को शिक्षा/चिकित्सा सहयोग पहुँचाना। **6. धरोहर** - नैतिक/धार्मिक मूल्यों के प्रचार-प्रसार हेतु नई शिक्षा नीति के अनुसार धरोहर पुस्तकों का प्रकाशन। **7. सर्वार्थसिद्धि** - भोपाल में बालिकाओं को शास्त्री करने वाले महाविद्यालय का 2024 में शुभारंभ।

Created by Universal Document Converter

अंतर्मन

समय-समय पर धार्मिक-सामाजिक आध्यात्मिक विचारों को लेकर सरल भाषा में छोटी-छोटी कविताओं, पाठों, पूजनों के माध्यम से अपने मन के भावों को पिरोता हूँ, जो व्हाट्सएप एवं पुस्तकों के माध्यम से आप तक पहुँचता भी है। मेरा सौभाग्य है कि ज्यादातर पाठकों को वे काव्य बोधगम्य होते हैं, अत: वे स्नेह पूर्वक हमारा उत्साहवर्धन भी करते हैं।

5 वर्ष पूर्व मैंने नव देवताओं की पूजन स्वरूप मंगल शान्ति विधान की रचना की थी, जो अनेक स्थानों पर सराहा गया। उसके बाद लघु पंच परमेष्ठी विधान लिखने की भावना थी पर वह अभी मन में ही है। भिण्ड में दसलक्षण पर्व के अवसर पर 'चौबीस तीर्थंकर विधान' की रचना करने का भाव बना और वह पूर्ण भी हुई। जो कारणवश किंचित् विलम्ब से ही सही अष्टाह्निका पर्व के अवसर प्रकाशित किया जा रहा है।

चौबीसों ही तीर्थंकरों का स्वरूप एक जैसा ही है फिर भी कुछ लोग विविध स्वरूपों में स्वीकार कर रहे हैं, अलग-अलग दिन, अलग-अलग राशि, ग्रहों से उनको जोड़कर पूजन, शान्तिधारा आदि की पद्धतियाँ प्रचलित हो रही हैं, अत: मैंने इस विधान के माध्यम से यह प्रयास किया है कि सभी तीर्थंकर भगवान वीतरागी, सर्वज्ञ, हितोपदेशी हैं सभी तीर्थंकर अनंत चतुष्टयवन्त हैं और सच में तो वर्तमान में सभी तीर्थंकर शरीर रहित अशरीरी पद सिद्ध दशा को प्राप्त हो चुके हैं, अत: उनके वर्णादि से भी ग्रहों को जोड़ना या नाम राशि के कारण जोड़कर लौकिक कामनाओं की पूर्ति हेतु कामना करना जो उचित नहीं है।

चौबीसों ही तीर्थंकरों ने देव-शास्त्र-गुरु, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, निमित्त-उपादान, निश्चय-व्यवहार, क्रमबद्धपर्याय, द्रव्य-गुण-पर्याय

Created by Universal Document Converter

इत्यादि का स्वरूप एक जैसा ही बतलाया है, अत: कुछ विशिष्ट सिद्धान्तों को अष्टकों में याद करते हुए चौबीसों तीर्थंकरों की पूजन की गई है।

मुम्बई में एक धर्मस्नेही ममता बहनजी रहती हैं, जो बहुत ही उत्साही व प्रचार-प्रसार में संलग्न रहती हैं, उनकी भावना थी कि वैवाहिक आदि कार्यक्रमों के समय जो पूजनें की जाती हैं, उनमें बहुत अधिक आध्यात्मिकता है जो कि कई बार उनको उस प्रसंग में उतनी अनुकूल नहीं लगती है अत: उनकी भावना थी कि कुछ सामान्य जीवन के अनुरूप भी सरल भाषा-शैली व सरल भाव हों। तो उनकी प्रेरणा से पंचपरमेष्ठी पूजन भी नवीन लिखी है जिसकी जयमाला में कुछ सामान्य भावों को ही पिरोया है। उस पूजन को भी इस विधान में प्रारम्भ में संकलन किया गया है।

धन्य हैं हमारे पंच परमेष्ठी भगवान व चौबीस तीर्थंकर भगवान जिनका नाम स्मरण भी भावों में विशुद्धि लाता है। जिनका गुण स्मरण उन जैसा बनने का उल्लास जागृत करता है। उनका गुणानुवाद करते हुए मन प्रफुल्लित होता है। उनके गुणों के प्रति हृदय में जो गुणानुराग उत्पन्न हुआ है उसको प्रस्तुत करने के लिए यह विधान आपके हाथों में प्रस्तुत है। आप भी चौबीस तीर्थंकरों का गुणानुराग पूर्वक गुणानुवाद करके गुणानरूप होने की भावना भाते हुए अपने जीवन को सफल करें - यही मंगल भावना है। हार्दिक निवेदन है कि यदि किसी भी प्रकार की सैद्धान्तिक या भाषा सम्बन्धित त्रुटि हो तो यथायोग्य स्वयं परिमार्जन करें और मुझे भी अवगत कराकर जिनवाणी की सेवा में अपना योगदान देने का कष्ट करें।

- राजकुमार शास्त्री
शाश्वतधाम, उदयपुर
(21-03-24)

Created by Universal Document Converter

मंगल पाठ

('हरिगीतिका' छंद)

दोष अष्टादश रहित, सर्वज्ञ श्री अरहन्त हैं।
सर्वोदयी संदेश जिनका, वीर्य-सुख भी अनन्त हैं।।1।।
विधि अष्टविरहित ज्ञानतनयुत, तनरहित जो सिद्ध हैं।
गुण नंतमय प्रभु शोभते, पर अष्ट गुण ही प्रसिद्ध हैं।।2।।
दशधर्म द्वादश तप धरें, आचार पंच सु निरत हैं।
षडावश्यक गुप्ति त्रय जो, पालते आचार्य हैं।।3।।
अंग एकादश चतुर्दश, पूर्व का स्वाध्याय है।
पठन पाठन रत रहें, वे उपाध्याय महान हैं।।4।।
विषय-आशा रहित हैं जो, सर्व संग विमुक्त हैं।
निज ज्ञानध्यान करें सदा, लौकिक क्रिया से मुक्त हैं।।5।।
त्रयलोक में कृत्रिम-अकृत्रिम, शोभते जिनभवन हैं।
हैं मोह के नाशक निलय, सादर उन्हें मम नमन है।।6।।
जिनवर विरह को दूर करती, प्रतिमा जिनवरदेव की।
दृगमोह क्षय हो उस घड़ी, जिस घड़ी जिनवर सेव की।।7।।
स्याद्वादमय है कथन जिसमें, आत्मतत्त्व प्रकाशिनी।
मुक्ति पथ दिग्दर्शिका जो, भव्य भव-भय नाशनी।।8।।
वस्तु स्वभाव ही धर्म है, अरु रतनत्रय भी धर्म है।
दशलाक्षणी जो धर्म धारें, नष्ट होते कर्म हैं।।9।।
पंचपरमेष्ठी, जिनालय, जिनवचन, जिनबिम्ब हैं।
जिनधर्म सह सबको नमन, निज आत्म के प्रतिबिंब हैं।।10।।
जिनके गुणों का स्मरण, सब पाप मल को क्षय करें।
नवदेव हैं यह पूज्य सब, जो जगत में मंगल करें।।11।।

Created by Universal Document Converter

प्रतिमा प्रक्षाल पाठ

पुण्योदय है आज हमारा, जिनवर दर्शन पाये हैं।
जिन दर्शन कर निज दर्शन हों, यही भावना भाये हैं।।

अथ पौर्वाह्निकदेववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजास्तवनवन्दनासमेतं श्री पंचमहागुरुभक्तिपूर्वककायोत्सर्गं करोम्यहम्। (नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

स्वर्ण रत्नमय सिंहासन पर, हे प्रभुवर तुम शोभित हो।
भाव पीठ स्थापित करता, तव गुण पर मैं मोहित हो।।

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थापनं करोमि।

तन अरु वसन शुद्ध हैं प्रभुवर, मनशुद्धि की चाहत है।
परिणति सिंहासन पर आओ, हे जिनवर तव स्वागत है।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मतीर्थाधिनाथ भगवान्निह सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ।

स्वर्ण कमल पर जिनवर शोभित, कलश विराजित हों चहुँ ओर।
जिनवर की प्यारी छवि लखकर, उदित हुआ है समकित भोर।।

ॐ ह्रीं अर्हम् कलशस्थापनं करोमि।

निर्मल जिनवर, निर्मल है जल, निर्मल मन करने आया।
पुण्योदय है आज हमारा, यह अवसर जिनवर पाया।।

ॐ ह्रीं श्री स्नपनपीठस्थिताय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो परिपूर्ण शुद्ध ही जिनवर, प्रक्षालन का फिर क्या काम?
निर्मलता बस लक्ष्य एक है, तव प्रक्षालन तो बस नाम।।
प्रासुक जल लेकर कलशों में, भाव शुद्धि से करूँ न्हवन।
वीतराग निर्दोष रूप लख, प्रमुदित होता मेरा मन।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यन्तं चतुर्विंशति-तीर्थंकरपरमदेवमाद्यानामाद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे..... नाम्निनगरे मासानामुत्तमे.....मासे.....पक्षे....दिने मुन्यार्यिकाश्रावक-श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि।

Created by Universal Document Converter

('दोहा' छंद)

जिनवर के संस्पर्श से, जल भी हुआ पवित्र।
निज सम जो पर को करे, वह ही सच्चा मित्र।।
करूँ प्रक्षालन वस्त्र से, निज परिणति चमकाय।
बस अभेद पर दृष्टि हो, भेद नहीं दिखलाय।।

('वीर' छंद)

शुद्ध भाव अरु शुद्ध वस्त्र से, कीना है प्रतिमा प्रक्षाल।
निजस्वरूप का अनुभव करके, चलूँ मुक्तिपथ की अब चाल।।

ॐ ह्रीं शुद्धवस्त्रेण प्रक्षालनं करोमि।

मन की मिटी मलिनता प्रभुवर, तव गुणनिधि के चिन्तन से।
और अशुचि तन हुआ शुद्ध है, चरण कमल स्पर्शन से।।
नरतन सफल हुआ है मेरा, वीतराग पथ पाकर के।
हो पुरुषार्थ प्रभुवर ऐसा, रुकूँ मुक्ति पुर जाकर के।।
जब तक निज में न रम जाऊँ, दर्शन पूजन अर्चन हो।
सत्संगति स्वाध्याय सदा हो, निज हित हेतु समर्पण हो।।

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थिताय जिनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

महत्त्वपूर्ण मंत्र

निम्नलिखित मंत्र पढ़कर जल मस्तक पर सिंचित् करें -

ओं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्त्रावय-स्त्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं सं ह्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

निम्नलिखित मंत्र पढ़कर तिलक लगावें -

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगशुद्धिं कुरु कुरु।

निम्नलिखित मंत्र पढ़कर रक्षासूत्र बांधें -

ओं नमोऽर्हते सर्वं रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा।

निम्नलिखित मंत्र पढ़कर मंगल कलश की स्थापना करावें -

ओं अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेस्मिन्-----मासे----पक्षे------तिथौ-------वासरे------वर्षे इह----नगरे----जिनमन्दिरे------मंडलविधानस्य निर्विघ्नसमाप्त्यर्थं मण्डपभूमिशुद्धयर्थं पात्रशुद्धयर्थं शान्त्यर्थं पुण्याहवाचनार्थं पंचरत्नगंधपुष्पाक्षतादिबीज पूरशोभितं मंगलकलशस्थापनं करोम्यहं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

विनय पाठ

('वीर' छंद)

चतुर्गति में भ्रमते-भ्रमते, मानव तन मैंने पाया।
महाभाग्य मेरा जागा जो, जिनवर दर्शन को आया।।1।।

वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, हित उपदेश तुम्हारा है।
तव दर्शन से हे जिन स्वामी, मोह शत्रु भी हारा है।।2।।

जिनपथ को जो जन न पाते, भव-भव में वे रुलते हैं।
पुण्योदय जो जिनपथ पायें, मुक्ति पथ वे चलते हैं।।3।।

चिंतामणिसम तुमको पाया, हो फिर क्यों जग की आशा।
आप दर्श से पौरुष जागा, क्षण में मोह तिमिर नाशा।।4।।

हे जिनवर तव दर्शन से ही, निज अंतर रुचि जागी है।
वीतराग पथ प्रिय लगता है, विषयों की रुचि भागी है।।5।।

तुम सम प्रभुवर मिले पूर्णता, अरु पवित्रता आ जावे।
हे जिनवर तव पूजन से अब, और न कुछ यह मन चाहे।।6।।

वीतरागता न हो जब तक, वीतराग का राग रहे।
वीतरागता ही मंगलमय, राग-द्वेष तो आग लगे।।7।।

मुक्ति पंथ दाता हो प्रभुवर, तुम ही जग उद्धारक हो।
निज वैभव का ज्ञान कराते, भविजन के उपकारक हो।।8।।

पंच परम पद मंगलमय हैं, मंगलमय हैं श्री महावीर।
जिनवच अरु जिनधर्म सुमंगल, नाशो प्रभुवर मेरी पीर।।9।।

सच्चा मित्र...

न्याय नीति पर ले चले, मन को रखे पवित्र।
सुख दुख में जो साथ दे, उसको मानो मित्र।।

Created by Universal Document Converter

पूजा पीठिका

('वीर' छंद)

अरहंत, सिद्ध, सूरि अरु पाठक, सर्व साधु को नमन करूँ।
पंच परम पद ये ही जग में, तिनि गुण चिन्तन-मनन करूँ।।

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

अरहंत, सिद्ध व साधु जग में, अरु सर्वज्ञ कथित है धर्म।
मंगल, उत्तम, शरण जगत में, ये ही जिय को दाता शर्म।।
मोह-राग-रुष पाप गलें, अरु सच्चा सुख इनसे मिलता।
लोकोत्तम अरु शरणभूत हैं, इन्हें नमें भवि उर खिलता।।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

पंच परम गुरु का गुण चिंतन, राग-द्वेष हरने वाला।
अर्चक-पूजक-चिंतक के उर, ज्ञानप्रभा भरने वाला।।
जिनवच में जो भवि रमते हैं, मोह वमन हो जाता है।
स्व-पर का हो भेदज्ञान, अरु निजानंद रस पाता है।।
जिनवर का पथ हमें मिला है, खुद जिनवर बन जाने को।
भक्तिभाव से करो अर्चना, लौट न भव में आने को।।
सुर-नर-पशु कृत विघ्न भागते, इसमें कुछ आश्चर्य नहीं।
पंच परम पद पूजन से जन, हो जाते हैं पूज्य यहीं।।

।। पुष्पांजलिं क्षिपामि ।।

('चौपाई' छंद)

जल-चंदन-अक्षत-पहु लाया, चरु अरु दीप-धूप-फल भाया।
मंगल गान गीत शुभ गाया, प्रभु को हर्षित अर्घ्य चढ़ाया।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-साधु-पंचपरमेष्ठिभ्यो, भगवज्जिनसहस्राष्ट नामभ्यः, जिनपंचकल्याणकेभ्यश्च अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

('पद्धरि' छंद)

अष्टादश दोष रहित जिनेश, त्रिभुवन के ज्ञायक हो महेश।
तुम मुक्तिमार्ग के नायक हो, भवि जीवन को सुखदायक हो।।
तुम हो अनन्त गुणवन्त देव, शत इन्द्र करें प्रभु तुम्हरी सेव।
तव आराधन से हे जिनवर, भविजन सब होते मुक्तिवर।।
मैं द्रव्य शुद्धि कर यथायोग्य, अब भाव शुद्धि चाहूँ मनोज्ञ।
इन्द्रादिक पद की चाह नहीं, विषयों की भी अभिलाष नहीं।।
तव पूजन से कुछ न चाहूँ, बस तुम सम ही बनना चाहूँ।
प्रभुदर्शन से मन सुमन खिला, मानो मरुस्थल में नीर मिला।।

।। पुष्पांजलिं क्षिपामि।।

('हरिगीत' छंद)

अरहन्त सिद्धाचार्य पाठक, साधु वंदन योग्य हैं।
ऋषभादि तीर्थंकर हमारे, पथ प्रदर्शक पूज्य हैं।।
सीमंधरादि जिनवरा, शोभित महा विदेह में।
हैं जिनवचन मंगलमयी, आतम दिखाते हैं हमें।।
ऋद्धिधारक मुनिवरों के, चरण में मम नमन हो।
चलूँ उनके ही सुपथ पर, मोह का अब वमन हो।।
हैं तीर्थक्षेत्र सुखद सभी, हमको भवोदधि तारने।
जिन चैत्य-चैत्यालय जजूँ, मैं मात्र मुक्ति कारणे।।
वीतरागी धर्म है बस, राग हरने के लिए।
जिन अर्चना है पूज्य-पूजक, भेद भरने के लिए।।

।। पुष्पांजलिं क्षिपामि।।

Created by Universal Document Converter

देव-शास्त्र-गुरु का अर्घ्य

चिदानंद चिन्मय के सन्मुख, जड़ वैभव का मोल नहीं।
इन्द्र विभूति-चक्री वैभव, का भी कोई तोल नहीं।।
लौकिक पद की चाह न किंचित्, पद चाहूँ मैं एक अनर्घ्य।
देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, करूँ समर्पित मैं यह अर्घ्य।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सिद्ध भगवान का अर्घ्य

क्षायिक दर्शन-ज्ञान-अगुरुलघु, सूक्ष्मत्व अरु अव्याबाध।
समकित-वीरज अवगाहन से, और रही न कोई साध।।
प्रकट अष्ट गुण हुए प्रभु को, यह कहना है बस व्यवहार।
गुण अनंतमय प्रभु शोभते, जहाँ न कोई है उपचार।।
है अनंत गुणमयी विभूति, अमित काल तक भोगेंगे।
बनें प्रभु के हम अनुगामी, अब क्यों भव में रोवेंगे।।
कर सिद्धत्व साध्य ही अपना, सिद्धों को सादर ध्याऊँ।
गुण अनंतमय अर्घ्य समर्पित, लौट न फिर भव में आऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सीमंधर भगवान का अर्घ्य

('वीर' छंद)

निज सीमा को धारण करते, सीमंधर कहलाते हैं।
निज सीमा को कोई न छोड़े, सबको यह समझाते हैं।।
द्रव्य-क्षेत्र अरु कालभावमय, निज सीमा है बतलाई।
निज सीमा को जो स्वीकारे, उसकी ही महिमा भाई।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

पंच परमेष्ठी पूजन

स्थापना

('वीर' छन्द)

वीतराग-सर्वज्ञ-हितंकर, अर्हत् प्रभु को है वंदन।
द्रव्य-भाव-नो कर्म रहित, अशरीरी प्रभु को भी वंदन।।
छत्तिस गुणयुत परम हितैषी, श्री सूरीश्वर करूँ नमन।
उपाध्याय जिन ध्वनि के दाता, मेटो भव-भव का क्रन्दन।।
निज आतम की करें साधना, सब मुनिराजों की जय हो।
पंच परम पद मम उर आओ, यही निवेदन करूँ प्रभो।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

सम्यग्दर्शन मूल धर्म का, हे प्रभु मैं न जान सका।
मिथ्यामति से चतुर्गति में, जन्म-मरण करता भटका।।
देव-धर्म-गुरु सप्त तत्त्व अरु, निज आतम श्रद्धान करूँ।
शुद्धभाव शीतल जल अर्पित, जन्म-मरण दुख नाश करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-रोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतराग-सर्वज्ञ देव हैं, वीतरागतामय आगम।
नग्न दिगम्बर गुरु हमारे, अनुभवते जो निज आतम।।
देवशास्त्रगुरु का स्वरूप लख, नित नव मंगलगान करूँ।
सुरभित शीतल चंदन अर्पित, भवाताप का नाश करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

ज्ञानानन्द स्वरूप जीव का, न अजीव में होता ज्ञान।
आस्रव-बंध दुखद पर संवर, निर्जर-मोक्ष सुखद हैं मान।।
सप्त तत्त्व में हेय-ज्ञेय अरु उपादेय का ज्ञान करूँ।
उज्ज्वल धवलाक्षत कर अर्पित, अक्षय पद को प्राप्त करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-दर्शमय आतम स्व है, अरु पर तत्त्व है सारा लोक।
स्व-पर भेद विज्ञान बिना ही, अज्ञ पा रहा है दु:ख थोक।।
निज-पर का मैं ज्ञान करूँ, अरु निज में ही विश्राम करूँ।
पुष्प सुगंधित चरण चढ़ाकर, काम भाव का नाश करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो कामरोगविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चिदानन्द चिन्मय ध्रुव आतम, एकमात्र जग में श्रद्धेय।
नित्य त्रिकाली सुखमय मैं हूँ, अन्य तत्त्व हैं सारे हेय।।
द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित मैं, निज आतम श्रद्धान करूँ।
सरस मधुर नैवेद्य समर्पित, क्षुधा रोग का नाश करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्र निश्चय धर्म कहा है, चारित्र तो है समता भाव।
मोह-क्षोभ से रहित आत्म का, प्रगटाऊँ मैं शुद्ध स्वभाव।।
चारित्र निज आतम में रमना, हे प्रभु! इसको प्राप्त करूँ।
तिमिर विनाशक दीप समर्पित, मोह तिमिर का नाश करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तु स्वभाव धर्म कहलाता, जानूँ प्रभुवर वस्तु स्वभाव।
वस्तु स्वभाव ज्ञान बिन स्वामी, चतुर्गति का है भटकाव।।
मैं तो जाननहार हूँ स्वामी, कर्तापन का नाश करूँ।
धूप चढ़ाकर श्री चरणों में, अष्ट कर्म का नाश करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

वीतरागता धर्म कही प्रभु, धर्म अहिंसा कही अहा।
राग-द्वेष होना हिंसा है, ज्ञायक रहना धर्म महा।।
धर्म धार उत्तम अविनाशी, निज आश्रित सुख प्राप्त करूँ।
सरस-सुवासित फल अर्पित कर, महामोक्ष फल प्राप्त करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावक अरु मुनिधर्म बताया, दस लक्षणमय धर्म कहा।
जिनवर कथित धर्म जो धारे, उसका जीवन सफल अहा।।
कथन धर्म के विविध कहे पर, धर्म एक निज उर धारूँ।
अर्घ्य समर्पित कर चरणों में, मैं अनर्घ्य पद प्राप्त करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

('दोहा' छन्द)

पंच परम पद लोक में, पंचम गति दातार।
मंगल-उत्तम-शरण हैं, हे जिय उर में धार।।

('वीर' छन्द)

कर्म पर्वतों के नाशक अरु, विश्व तत्त्व के हैं ज्ञाता।
मोक्ष मार्ग के नायक प्रभुवर, सारा जग उनको ध्याता।।
अष्ट कर्म को नष्ट किया अरु, अष्ट गुणों को प्रकट किया।
अष्टम वसुधा में निवास है, निजानंद को प्राप्त किया।।
गुण छत्तीस के धारक सूरि, उपाध्याय गुण हैं पच्चीस।
आत्म साधनारत साधु हैं, भविक झुकाते सविनय शीश।।
ये ही पाँचों हैं परमेष्ठी, उनका जय-जय गान करूँ।
धर्म स्वरूप बताया उनने, उसका मैं श्रद्धान करूँ।।

Created by Universal Document Converter

सुख-दुख दाता कोई न जग में, रक्षक केवल है जिनधर्म।
परद्रव्यों को सुखकर माने, तो बँधते हैं दुखकर कर्म।।

हे प्रभु! तव स्वरूप मैं जानूँ, न्याय-नीति पर रखूँ कदम।
हो नि:शंक-निरपेक्ष भाव से, प्रभु पद पूजूँ मैं हरदम।।

यत्नाचार सहित हो वर्तन, पाप भाव से नहीं लगाव।
धन-पद-यश की रहे न तृष्णा, श्रद्धा में हो ज्ञायक भाव।।

पुण्योदय से धन-पद मिलता, महा पुण्य से मिलता धर्म।
धर्म पंथ पर चलना पौरुष, धर्म पथिक पाता शिव शर्म।।

हे प्रभुवर! जब तक जीवन है, पंच प्रभु का दर्श मिले।
सुख-दुख या फिर लाभहानि हो, एकमात्र तव शरण रहे।।

पाँचों परमेष्ठी की जय हो, जय हो तीर्थंकर चौबीस।
देवशास्त्रगुरु की भी जय हो, चरणों में धरता मैं शीश।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्यो ! अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

('वीर' छन्द)

पाँचों परमेष्ठी को ध्याकर, निज आतम में रम जाऊँ।
करूँ समर्पण निज का निज में, लौट न फिर भव में आऊँ।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अधिकारी अधीनस्थ को निज सम नहीं बना पाते हैं।
अच्छे वक्ता भी श्रोता को कहाँ वक्ता बना पाते हैं।।
यह तो जिनेन्द्र भगवान की ही महानता है दोस्तो-
जो अपने भक्तों को जिनेन्द्र बनने का मार्ग बता जाते हैं।।

Created by Universal Document Converter

श्री चौबीस तीर्थंकर विधान

स्थापना

('वीर' छन्द)

ऋषभदेव से महावीर तक, तीर्थंकर चौबीस हुए।
वीतराग-सर्वज्ञ-हितंकर, तीन लोक के ईश हुए।।
दर्शन-ज्ञान-वीर्य-सुखमय प्रभु, निजानन्द में लीन हुए।
सबको मुक्तिमार्ग दिखाकर, भवसागर से पार हुए।।
तव पथ के हम पथिक बनें प्रभु, यही भावना भाते हैं।
मम उर में तुम हे प्रभु आओ, यही भाव मन लाते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

('दोहा' छन्द)

श्री चौबीस जिनेश ने, बतलाए सिद्धान्त।
उनको जो निज उर धरे, होता सहज भवान्त।।
हे प्रभु! तव गुणगान का, बड़ा असंभव काज।
निज विशुद्धि हित पूज कर, पाऊँ शिवपद राज।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

('वीर' छन्द)

देव-शास्त्र-गुरु के बिन जाने, सप्त तत्त्व का ज्ञान न हो।
सप्त तत्त्व के ज्ञान बिना जिय, स्व-पर भेदविज्ञान न हो।।
स्व-पर भेदविज्ञान बिना, निज आतम का श्रद्धान न हो।
क्रमशः इनका ज्ञान करो, तब होता सम्यग्दर्श अहो।।
सम्यग्दर्शन मूल धर्म का, चौबिस जिनवर कहते हैं।
जन्म-जरा-मृतु नाश करन को, जल चरणार्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-रोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

सम्यग्दर्शन-ज्ञान पूर्वक, ही चारित्र प्रकट होता।
मोह-क्षोभ से रहित साम्य पा, भव्य जीव भव दुख खोता।।
सम्यग्चारित्र परम धर्म है, चारित है निज आत्म स्वभाव।
है चरित्र निज आत्म रमणता, रंग राग का जहाँ अभाव।।
चारित्तं खलु धम्मो है यह चौबिस जिनवर कहते हैं।
भवाताप के नाश हेतु प्रभु, चन्दन अर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-क्षेत्र अरु काल-भाव यह, स्व चतुष्ट कहलाता है।
स्व चतुष्ट में रहने वाला, द्रव्य ही शोभा पाता है।।
निज गुण पर्यय में बसने से, वस्तु द्रव्य कहा जाता।
पर निरपेक्ष द्रव्य रहते हैं, नहीं किसी से कुछ नाता।।
पर्यय भी निरपेक्ष बदलती, चौबिस जिनवर कहते हैं।
अक्षय पद के प्राप्ति हेतु, धवलाक्षत अर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध ज्ञानयुत जीव तत्त्व है, जीव तत्त्व ही आश्रय योग्य।
है अजीव जो ज्ञान रहित है, पंच भेद हैं जानन योग्य।।
आस्त्रव-बंध दुखद अरु अशुचि, अत: कहें प्रभु त्यागन योग्य।
संवर-निर्जर-मोक्ष दशा ही, है हितकर प्रकटावन योग्य।।
स्वपर और हित-अहित तत्त्व को चौबिस जिनवर कहते हैं।
काम भाव के नाश हेतु, यह पुष्प समर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो कामरोगविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

कार्य रूप जो स्वयं परिणमे, उपादान कहलाता है।
हो अनुकूल वहाँ पर जो भी, वह निमित्त कहलाता है।।
कार्य विवक्षित उपादान में, नहीं निमित्त में होता है।
उपादान से उपादान सम, कार्य सदा ही होता है।।
कार्य समय दोनों ही होते, चौबिस जिनवर कहते हैं।
क्षुधा रोग के नाशकरन को, शुचि चरु अर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो जिसका जब जैसे होना, वह उसका तब होता है।
समवायों के ही सुमेल से, कार्य वहाँ पर होता है।।
अकर्तृत्व का भाव जगाने, ही संदेश दिया क्रमबद्ध।
नहिं प्रमाद का पोषण हो, पुरुषार्थ हेतु अब हो कटिबद्ध।।
चौबिस जिनवर सब कुछ जाने, बदल नहीं कुछ सकते हैं।
मोहभाव के नाशकरन को, दीप समर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो वस्तु या भाव क्रिया जो, जैसी जिसकी जितनी है।
निश्चय नय कहता है उसको, वैसी उसकी उतनी है।।
अन्य भाव को अन्य का कहना, कहलाता व्यवहार कथन।
निश्चय नय परमार्थ बताता, अतः वही परमार्थ वचन।।
एक वस्तु के कथन दो तरह, चौबिस जिनवर कहते हैं।
अष्ट कर्म के नाशकरन को, धूप समर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

हो अन्वय-व्यतिरेक जहाँ पर, कारण-कार्य वहाँ होता।
व्यापक-व्याप्य भाव होने पर, कर्ता कर्म भाव होता।।
व्यापक द्रव्य व्याप्य पर्यय में, कर्ता-कर्म कहा जाता।
षट्-कारक से पर्यय होती, परमारथ यह बतलाता।।
कोई किसी का कर्ता न धर्ता, चौबिस जिनवर कहते हैं।
महा मोक्ष फल पाने हेतु, फल यह अर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम की रुचि सम्यग्दर्शन, आत्म बोधि है सम्यग्ज्ञान।
शुद्धातम में रमण है चारित्र, निश्चय से यह शिवमग जान।।
निश्चय संग शुभ राग जो होता, वह भी शिवपथ कहलाता।
सच में तो वह बंध हेतु है, जो माने होता ज्ञाता।।
स्वाश्रय से ही मुक्ति होती, चौबिस जिनवर कहते हैं।
पद अनर्घ्य के पाने हेतु अर्घ्य समर्पित करते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशन्तिजिनेन्द्रभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावना

('वीर' छंद)

भव समुद्र में भ्रमते-भ्रमते, मानव तन मैंने पाया।
महाभाग्य मेरा जागा जो, जिनवर दर्शन को आया।।
परद्रव्यों की प्रीति से ही, भव-भव में दुख पाए हैं।
त्रस-थावर गतियों में भ्रमते, आज यहाँ तक आए हैं।।
परद्रव्यों का ज्ञायक माना, निज आतम तो रहा अगम्य।
जिनवचनों से अब यह जाना, शुद्धातम त्रिभुवन में रम्य।।
ममता जब निज की आ जाए, मिल जाए तब निजपद राज।
आतम हित में रहूँ समर्पित, अन्य रहे ना कोई काज।।

Created by Universal Document Converter

अगम आत्मा में हो निष्ठा, हो प्रज्वलित ज्ञान दीपेश।
कर्म पाश से रहित विपाशा, आकुलता का जहाँ न लेश।।
धन-पद-यश की न अभिलाषा, बस तुम सब बनना चाहूँ।
करूँ समर्पण निज का निज में लौट न फिर भव में आऊँ।।
होवे सफल भावना मेरी, सादर नम्र निवेदन है।
वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर, सादर सविनय वन्दन है।।

अर्घ्यावलि

आदिनाथ भगवान को अर्घ्य

('हरिगीतिका+दोहा' छंद)

चैतन्य चिन्तामणि स्वयं मैं, शक्तियाँ भरपूर हैं।
सर्वार्थसिद्धि हो स्वयं से, कष्ट होते दूर हैं।।
अन्य परिग्रह क्या करे जब, जीव ही सुखकार है।
निज रूप दिखलाया ऋषभ ने, वंदना शत बार है।।
चेतन चिंतामणि रतन, अनुपम अमित अनर्घ्य।
श्री ऋषभेश जिनेश के, चरण चढ़ाऊँ अर्घ्य।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ भगवान को अर्घ्य

('दोहा' छंद)

सहज ज्ञानमय आत्मा, है अनंत गुणखान।
निर्मल निर्मम शुद्ध है, है त्रिकाल निर्मान।।
अनुभव कर रिपु जीतियो, अजितनाथ भगवान।
अर्घ्य चढ़ा पूजन करूँ, बनू मैं आप समान।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

संभवनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

समभावी भावों से भगवन्, संभव कार्य सभी होते।
शुद्धातम के अवलंबन से, त्रिविध कर्म मल को धोते।।
संभवनाथ के पद पंकज में, सादर अर्घ्य चढ़ाता हूँ।
मुक्ति पद संभव हो स्वामी, यही भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदननाथ भगवान को अर्घ्य

('चौपाई' छंद)

शुद्धातम सुख रूप बताया, मोह-राग दुख रूप दिखाया।
आतम अनुपम और त्रिकाली, है अनंत गुण वैभवशाली।।
वंदन है अभिनंदन स्वामी, निज वंदन कर हो जगनामी।
अर्घ्य समर्पित करता स्वामी, मैं पथ पाऊँ प्रभु शिवधामी।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुमतिनाथ भगवान को अर्घ्य

('अवतार' छंद)

मिथ्यामति से हे नाथ, भववन में भटका।
मैं निज स्वरूप को भूल, विषयों में अटका।।
हे सुमतिनाथ भगवान! सुमति प्रदान करो।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ नाथ, भव बाधा हर लो।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्री पद्मप्रभ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छन्द)

पद्मकान्तिमय पद्म चिह्नयुत, परमपूज्य पद्मप्रभ ईश।
गुण अनन्तमय प्रभु शोभते, सुर-नर नाथ नवाते शीश।।

Created by Universal Document Converter

जल से भिन्न पद्म रहता त्यों, जग से प्रभु अलिप्त रहते।
अष्टम वसुधा पाने हेतु, भविक अर्घ्य अर्पित करते।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुपार्श्वनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, के सुपार्श्व में नित्य रहूँ।
श्री जिनगुण महिमा को तजकर, अन्य भक्ति न कभी करूँ।।
श्री सुपार्श्व के चरण कमल में, गुणमय अर्घ्य चढ़ाता हूँ।
पद अनर्घ्य मिल जाए स्वामी, सादर शीश नवाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्री चन्द्रप्रभु भगवान को अर्घ्य

('सोरठा' छंद)

चन्द्रपुरी में जन्म, मात लक्ष्मणा नाथ की।
हर्षित पितु महासेन, तीन लोक प्रमुदित हुए।।
चन्द्र चरण में चिह्न, चन्द्रप्रभ भगवान का।
ललितकूट से सिद्ध, फाल्गुन शुक्ला सप्तमी।।
शीतल चन्द्र समान, गुण अनंत से शोभते।
मैं भी आप समान, जान आज हर्षित हुआ।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत भगवान को अर्घ्य

('सोरठा' छंद)

त्रिविध कर्म को जीत, सुखमय निज पद पा लिया।
सुविधिनाथ भगवान, शिव मग को दर्शा दिया।।
अष्टद्रव्यमय अर्घ्य, करूँ समर्पित चरण में।
गुण अनंतमय पुष्प, विकसित हों मम हृदय में।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

शीतलनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

भवाताप में झुलस रहा हूँ, शीतल प्रभु शीतलता दो।
मिथ्यामल से मलिन परिणति, को प्रभुवर निर्मल कर दो।।
अष्ट कर्म को नष्ट करूँ अरु, अष्टम वसुधा को पाऊँ।
अष्टद्रव्यमय अर्घ्य समर्पित, निज अनर्घ्य वैभव पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेयांसनाथ भगवान को अर्घ्य

('अवतार' छंद)

श्रेयांशनाथ भगवान, मम उर में आओ।
मैं नाशूँ दुर्जय मोह, शिव पथ दरशाओ।
शुद्धातम श्रेय स्वरूप, प्रभु ने दर्शाया।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ नाथ, मम उर हर्षाया।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वासुपूज्य भगवान को अर्घ्य

('हरिगीतिका' छंद)

वसुपूज्य के सुत आप हो, वसु कर्म ईंधन दह लिया।
वसु गुण प्रगट कर आपने, वसु भूपति का पद लिया।।
सब सिद्ध सम हैं शोभते, सुर-नर-पशु अरु नारकी।
कीट अन्तः कनक देखा, सत्य तुम ही पारखी।।
भादव चतुर्दशी शुक्ल की, निर्वाण चम्पापुर लिया।
मुक्ति वधू पाई प्रभु, जयकार इन्द्रों ने किया।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

विमलनाथ भगवान को अर्घ्य

('रोला' छंद)

विमलनाथ ने विमल आत्मा को है ध्याया।
राग-द्वेष मल नाश विमल पद को है पाया।।
मल विरहित शाश्वत निज पद को मैं भी पाऊँ।
इसी भावना से ही प्रभु मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अनन्तनाथ भगवान को अर्घ्य

('दोहा' छंद)

गुण अनन्तमय आत्मा, सदा अनादि अनन्त।
जो निज वैभव को लखे, बन जाए भगवन्त।।
प्रभु सम ही निज आत्मा, जाना मैंने आज।
प्रभु अनन्त को पूजकर, पाऊँ निज पद राज।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

धर्मनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

धर्मनाथ प्रभु धर्म धुरंधर, धर्म धरा पर दिखलाया।
भवसागर से भवि जीवों को, तरना प्रभुवर सिखलाया।।
अर्घ्य चढ़ाकर, प्रभु पूजन कर, लौट न फिर भव में आऊँ।
वीतरागमय धर्म धारकर, धर्मनाथ सा बन जाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शान्तिनाथ भगवान को अर्घ्य

('हरिगीतिका' छन्द)

सम्पदा षट्खण्ड की भी, शान्ति दे सकती नहीं।
निज आत्म की अनुभूति बिन, चिर शान्ति मिल सकती नहीं।।

Created by Universal Document Converter

श्री शान्तिप्रभु षट्खण्ड तज, निज आत्म में ही रम रहे।
अन् अर्घ्य पद की प्राप्ति हेतु, अर्घ्य अर्पित कर रहे।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंथुनाथ भगवान को अर्घ्य

('मानव' छंद)

जहाँ रागादि होते हैं, हिंसा भी वहाँ ही होती।
ज्ञायक स्वभाव निज माने, तो हिंसा कभी न होती।।
कुंथु आदि जीवों की, रक्षा करना बतलाया।
श्री कुंथुनाथ स्वामी ने, है करुणा भाव जगाया।।
हो यत्नाचार प्रवृत्ति, न दिल में किसी का दुखाऊँ।
मैं अर्घ्य समर्पित करके, अष्टम वसुधा को पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

सहज-सरल-शुचि-शरणभूत, शिव-शंकर तो शुद्धातम है।
अजर-अमर अरु अशरीरी, अविनाशी निज परमातम है।।
नित्य निरंजन निर्मल निर्मम, निज आतम को मैं ध्याऊँ।
अरनाथ को अर्घ्य चढ़ाकर, पंचम गति को मैं पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिनाथ भगवान को अर्घ्य

('त्रोटक' छंद)

जग की क्षणभंगुर शोभा लख, प्रभु त्याग चले सारे जग को।
निज आतम ही रमणीय अहो, निज गुण-पर्यय में आप रहो।।

Created by Universal Document Converter

प्रभु मोह बली को जीत लिया, निज नाम सु सार्थक आप किया।
श्री मल्लिनाथ प्रभु को ध्याऊँ, यह अर्घ्य चढ़ा शिवपद पाऊँ।।
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रतनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

सर्व परिग्रह त्याग मुनीश्वर, निज वैभव सु ग्रहण करते।
भय-लालच वश अरे अज्ञजन, हे प्रभु! तव पूजन करते।।
है अचिन्त्य शक्ति युत आतम, अन्य परिग्रह से क्या काम।
सर्व प्रयोजन अरे सिद्ध हों, जब निज में पावे विश्राम।।
श्री मुनिसुव्रत ने 'सु' व्रत ले, मोक्षमार्ग में किया गमन।
अर्घ्य समर्पित कर चरणों में, सादर सविनय करूँ नमन।।
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नमिनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

सूर्य कांति सम आभा जिनकी, चंद्रकांत सम शीतलता।
है वारिधि सम गुण अगाधता और मेरु सम कीर्ति लता।।
नमि जिन निज में नमकर मानो, निज में ही नमने कहते।
निज में रम कर अर्घ्य चढ़ा कर, भविजन शिवपथ पर चलते।।
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नेमिनाथ भगवान को अर्घ्य

('चौपाई' छन्द)

राजुल के प्रति राग है त्यागा, मुक्तिरमा से हो अनुरागा।
नेमि चढ़े तब श्री गिरनारी, वरण करेंगे अब शिवनारी।।
शुद्धातम का ध्यान लगाया, कर्म नाश कर शिवपद पाया।
सुरपति आकर शीश नवाया, सादर सविनय अर्घ्य चढ़ाया।।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Created by Universal Document Converter

श्री पार्श्वनाथ भगवान को अर्घ्य

('वीर' छन्द)

पर संयोग न दु:ख के कारण, पारस प्रभु बतलाते हैं।
भव-भव में उपसर्ग हुए बहु, रंच नहीं अकुलाते हैं।।
चिदानन्द चिन्मय में जमकर, कर्म शत्रु का नाश किया।
प्रभु सम थिरता पाने हेतु, अर्घ्य समर्पित आज किया।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर भगवान को अर्घ्य

('वीर' छंद)

मतिज्ञान से रहित हो सन्मति, शस्त्र रहित पर हो महावीर।
अगुरुलघु पर वर्धमान हो, निर्भय करते हो अतिवीर।।
वीर नाम है विरद आपका, त्रिशलानंदन कहलाते।
मुक्तिवधु के प्रियवर को लख, सुन-नर-मुनि नत हो जाते।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विनयांजलि

('वीर' छन्द)

वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर, सादर वंदन करता हूँ।
चतुर्गति में बहु दु:ख भोगे, नम्र निवेदन करता हूँ।।

हे प्रभु पशु तन पाकर मैंने, वध-बंधन दु:ख पाए हैं।
भार वहन अरु भूख-प्यास के, अकथित कष्ट उठाए हैं।।

नरक गति में छेदन-भेदन, मारन ताड़न बहुविध था।
एक बूँद जल एक अन्न कण, को प्रभुवर मैं तरसा था।।

मानव तन में गर्भ-जन्म अरु, बचपन के बहु कष्ट सहे।
यौवन पाकर मैं बौराया, सत्य स्वरूप को कौन कहे?

Created by Universal Document Converter

अर्द्ध मृतक सम वृद्ध अवस्था, अरु रोगों से हो नाता।
लाभ-हानि और यश-अपयश में, मिले न इक क्षण को साता।।
देव गति में दिव्य भोग लख, विषय चाह में जलता था।
सम्यग्दर्शन बिन हे प्रभु मैं, पाता नित आकुलता था।।
हे प्रभु मैंने जो दुःख भोगे, वचनों से न कह सकता।
चतुर्गति के अगणित कष्टों को, मैं अब न सह सकता।।
महा भाग्य मेरा जागा है, जो तव दर्शन पाए हैं।
जिनवच सुनकर मैंने जाना, क्यों यह कष्ट उठाए हैं।।
ज्ञानानन्द स्वरूप भुलाकर, नर-नारी माना मैंने।
कर्ता-धर्ता जग का समझा, ज्ञायक न जाना मैंने।।
धन परिजन पुरजन में रम कर, जीव तत्त्व को न जाना।
क्रियाकाण्ड में धर्म मानकर, सत्यपंथ को न माना।।
हे जिन मिथ्या मति को तजकर, सम्यग्दर्शन पाना है।
सम्यग्चारित्र धारण करके, खुद जिनवर बन जाना है।।
आदि प्रभु से महावीर तक, सबने यह सन्देश दिया।
जिन पथ पर जो भवि चलते हैं, उनने नरभव सफल किया।।
हे प्रभु अब मैं जिन पथ तजकर, अन्य कहीं न अब जाऊँ।
करूँ समर्पण निज का निज में, लौट न फिर भव में आऊँ।।

।। पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

महार्घ्य

('वीर' छन्द)

हे ऋषभ-अजित हे संभव जिन, अभिनन्दन वन्दन करते हैं।
जय सुमति-पद्म-सुपार्श्व प्रभु, चन्द्र प्रभु क्रन्दन हरते हैं।।
जय पुष्पदन्त-शीतल-श्रेयांश प्रभु, वासुपूज्य अरु विमलानन्त।
धर्म-शान्ति-कुन्थु-अर मल्ली, कर दो प्रभु तुम भव का अन्त।।

Created by Universal Document Converter

मुनिसुव्रत-नमि-नेमि पार्श्व प्रभु, महावीर के गुण गाऊँ।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, को निज उर में पधराऊँ।।

तव स्वरूप को जाने बिन प्रभु, अज्ञ जगत में रुलता है।
वीतराग-सर्वज्ञ प्रभु में, भेदभाव यह करता है।।

कोई भूत भगाने वाले, कोई शान्तिदाता हैं।
कोई पुत्र-पुत्रियाँ देते, कोई संकट त्राता हैं।।

हे प्रभु तव गुण चिन्तन करके, आज समझ में आया है।
चौबीसों तीर्थंकर प्रभु ने सब कर्तृत्व नशाया है।।

आप सभी ज्ञायक हैं प्रभुवर, ज्ञायक रहने कहते हो।
भक्तों से न राग आपको, कभी द्वेष न करते हो।।

धन-पद-यश की चाह मिटे प्रभु, मैं भी शुद्धातम ध्याऊँ।
करूँ समर्पण निज का निज में, लौट न फिर भव में आऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

('दोहा' छन्द)

स्व चतुष्ट में वास कर, चार घाति को नाश।
अनन्त चतुष्टय प्राप्त कर, हित पथ किया प्रकाश।।

ऋषभादि से वीर तक, तीर्थंकर चौबीस।
हैं समान गुणयुत सभी, वन्दन है जगदीश।।

('मानव' छन्द)

इस भव अटवी में भ्रमते, जब दुर्लभ नर-तन पाया।
जिनवर-जिनश्रुत-जिनगुरु के, संगम का अवसर आया।।

Created by Universal Document Converter

निज आतम की रुचि जागी, विषयों से मन घबराया।
जब भावना षोडस भायीं, तब तीर्थंकर पद पाया।।

ऋषभादिक वीर जिनेश्वर, इस भरत क्षेत्र में आए।
इन्द्रों ने आकर दिवि से, तब पंच कल्याण मनाए।।

अष्टादश दोष मिटाकर, घातिया कर्म विनशाये।
बल-ज्ञान- दर्श- सुख अतुलित, पाकर अरिहंत कहाये।।

हुई समवशरण की रचना, प्रमुदित सब भविजन आये।
ओंकारमयी वाणी में, निज रूप समझ हरषाये।।

चौबिसों तीर्थंकर को, निज शुद्ध स्वरूप सुहाया।
आतम अनादि अकृत्रिम, अरु गुण अनन्तमय गाया।।

षट् द्रव्यों से जो न्यारा, है सप्त तत्त्व में आला।
ज्ञायक तो है बस ज्ञायक, जो होता गौर न काला।।

जो है अबद्ध-अस्पृष्ट, अनन्य नियत अविशेष।
असंयुक्त भाव युत जाने, तो कर्म मिटे निःशेष।।

हे प्रभु मैं तव पूजन से, इन्द्रादिक पद ना चाहूँ।
है बस इतनी अभिलाषा, तुम सम निज में रम जाऊँ।।

('दोहा' छन्द)

आदिनाथ से वीर तक, तीर्थंकर चौबीस।
तव पथ मम पथ बन सके, नमन करूँ जगदीश।।

चौबिस प्रभु को पूज कर, पाऊँ आतमज्ञान।
जीवन-मरण समाधि युत, चाहूँ हे भगवान।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

Created by Universal Document Converter

महार्घ्य

('वीर' छंद)

पंच परम पद पूज रहा हूँ, अरु पूजूँ जिनवाणी को।
जिनमंदिर, जिनबिंब जजूँ मैं, सुख शान्ति के पाने को।।

वीतरागमय धर्म को पूजूँ, वीतराग बन जाने को।
तीर्थक्षेत्र सभी मैं वन्दूँ, भवसागर तर जाने को।।

पंचमेरु नंदीश्वर वंदूँ, वंदूँ मैं रत्नत्रय धर्म।
दशलक्षण मैं सादर वन्दूँ, जिनसे कटते सारे कर्म।।

तीन लोक के पूज्य पदों को, सादर वन्दन करता हूँ।
पद अनर्घ्य मिल जाये स्वामी, अर्घ्य समर्पित करता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्तसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो, द्वादशांगजिनवाणीभ्यो उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय, दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः त्रिलोकसम्बन्धीकृत्रिमाकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो, पंचमेरौ अशीतिचैत्यालयेभ्यो, नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो, श्री सम्मेदशिखर, गिरनारगिरि, कैलाशगिरि, चम्पापुर, पावापुर-आदिसिद्ध-क्षेत्रेभ्यो, अतिशयक्षेत्रेभ्यो, विदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरादिविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्यो, ऋषभादिचतुर्विंशति-तीर्थकरेभ्यो, भगवज्जिनसहस्राष्ट-नामभ्यश्च अनर्घ्यपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्याहवाचन

शान्तिधारा कराते हुए निम्नानुसार पुण्याहवाचन करावें -

ॐ पुण्याहं पुण्याहं लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजाता निर्वाणसागरप्रभृतश्चतुर्विंशतिपरमदेवाः वः प्रीयन्ताम् प्रीयन्ताम्। (धारा)

Created by Universal Document Converter

ॐ सम्प्रतिकालसंभवा वृषभादिवीरान्ताश्चतुर्विंशतिपरम-जिनेन्द्राः वः प्रीयन्ताम् प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवा महापद्मादिचतुर्विंशतिभविष्य-परमदेवाः वः प्रीयन्ताम् प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ विंशति परमदेवाः वः प्रीयन्ताम् प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ वृषभसेनादिगणधरदेवा वः प्रीयन्ताम् प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ सप्तर्द्धिविशोभिताः कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगम्बरसाधुचरणाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्। (धारा)

इह वान्यनगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ताः जिनधर्मपरायणा भवन्तु। दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु। सर्वजिनधर्मभक्तानां धनधान्यैश्वर्यबलद्युतियशः प्रमोदोत्सवाः प्रवर्तन्ताम्।

तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, वुद्धिरस्तु, कल्याणमस्तु, अविघ्नमस्तु, आयष्यमस्तु, आरोग्यमस्तु, कर्मसिद्धिरस्तु, इष्टसम्पत्तिरस्तु, काम-मांगल्योत्सवाः सन्तु, पापानि शाम्यन्तु, घोराणि शाम्यन्तु, पुण्यं वर्धताम्, धर्मोवर्धताम्, श्रीवर्धताम्, कुलं गोत्रं चाभिवर्धेताम्, स्वस्ति भद्रं चास्तु, आयुष्यमस्तु, क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा। श्रीमज्जिनेन्द्रचरणार-विन्देष्वानन्दभक्तिः सदास्तु।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

तदनन्तर शान्ति पाठ और विसर्जन पाठ पढ़ें।

विष-विषधर, वन-अनल संग, रहना हितकर होय।
पर जिनधर्म परांगमुख, संग न रहना कोय।।

Created by Universal Document Converter

शांतिपाठ

('हरिगीत' छंद)

तुम शान्ति सागर हो प्रभु, मैं शान्ति पाना चाहता।
हों जीव सारे शान्तिमय ही, और कुछ न चाहता।।

तव दर्श-पूजन से प्रभो, मुझको समझ यह आ गया।
मैं स्वयं सुखरूप हूँ, मम रूप मुझको भा गया।।
अब मोहतम का नाश होवे, ज्ञान का सुप्रभात हो।
सब ईति-भीति नष्ट होकर, धर्म का ही प्रसार हो।।

जबतक न तुम सम मम दशा हो, तव शरण मुझको मिले।
सज्जनों का साथ हो अरु, जिनवचन से उर खिले।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि

क्षमापना

('दोहा' छंद)

गुण अनंतमय आप हैं, मैं हूँ अति अल्पज्ञ।
तव गुण कथन न कर सकें, सुर-नर-मुनि बहु विज्ञ।।

पूजन-अर्चन कथन में, द्रव्य-भाव त्रुटि होय।
क्षमायाचना मैं करूँ, मानादिक को खोय।।

मंगलमय हैं वीर प्रभु, गौतम अरु कुन्दकुन्द।
मंगल जिनशासन अहो, मंगल हैं मुनिवृन्द।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि

Created by Universal Document Converter

तीर्थयात्रा

भवसागर से पार उतारे, वह तीरथ कहलाते हैं।
निज आतम ही निश्चय तीरथ, जिसको लख तिर जाते हैं।।
रत्नत्रय व्यवहार तीर्थ है, मोक्षमहल ले जाने को।
जिनवच भी हैं तीर्थ कहाते, भवसागर तिर जाने को।।
भवसागर से तिरे जहाँ पर, वह वसुधा भी पावन है।
हैं निर्वाण, सिद्ध अरु अतिशय, तीरथ जो मन भावन है।।
तीर्थंकर जहाँ मुक्ति पाते, निर्वाण क्षेत्र कहलाते हैं।
अन्य जीव जहाँ मुक्ति पायें, सिद्धक्षेत्र बन जाते हैं।।
गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान महोत्सव, जिस वसुधा पर होते हैं।
वे अतिशय हैं क्षेत्र कहाते, भव्यों के मल धोते हैं।।
महाभाग्य से अवसर आता, भविजन तीरथ जाने का।
कर्म नष्ट कर सुखी हुए, जो उनके दर्शन पाने का।।
पुण्याधीन नहीं निज तीरथ, पाने का तुम करो पुरुषार्थ।
निश्चय तीरथ मिलने पर ही, पूर्ण सिद्ध होते सब अर्थ।।

जानना है जीव को...

जानना है जीव को, जानता ना जीव को,
जाने बिना जीव तेरा कैसे उद्धार हो।
जाने नहीं जीव जो, कौन कहे उसे जीव?
जीव जाने बिना नहीं, तेरा बेड़ा पार हो।।
जड़ में जो अटका है, भव में वो भटका है,
जानो जीव, मानो जीव, तब ही सुधार हो।
मैं भी जीव, तू भी जीव, सिद्ध भगवन्त जीव,
जिनने बताया जीव को, उन्हें वंदना हमार हो।।

Created by Universal Document Converter

लेखक द्वारा लिखित प्रकाशित साहित्य

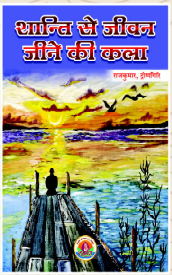

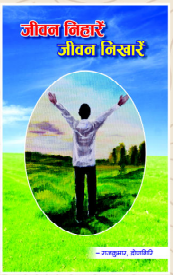

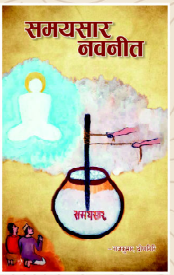

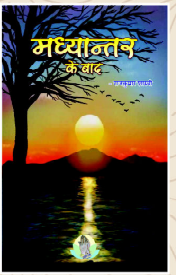

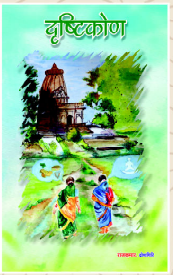

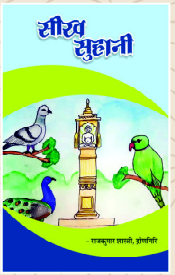

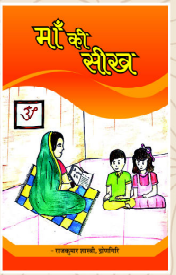

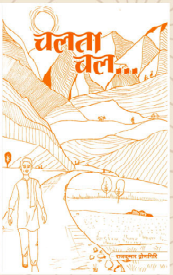

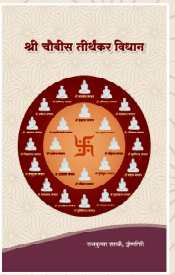

लेखक का अप्रकाशित साहित्य

Created by Universal Document Converter

संस्कार सुधा मासिक के विशेषांक

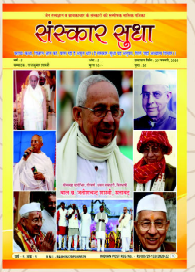

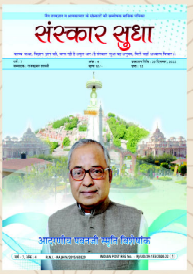

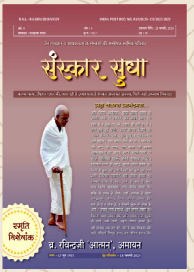

Created by Universal Document Converter